न्यायालय राजस्व परिषद, उत्तराखण्ड़, देहरादून।

निगरानी संख्या– 143/2014–15 अन्तर्गत धारा–333 ज0वि0 अधि0

श्रीमती कमलेश पत्नी शिव कुमार निवासी ज्वालापुर परगना ज्वालापुर, तहसील व जिला हरिद्वार।

बनाम

1. श्रीमती सुनीता जैन पत्नी जे0सी0 जैन ,2. श्रीमती नीता जैन पत्नी यू0जी0 जैन, निवासी ज्वालापुर परगना ज्वालापुर, तहसील व जिला हरिद्वार, 3. ग्राम सभा सीतापुर द्वारा प्रधान सीतापुर , परगना ज्वालापुर, तहसील व जिला हरिद्वार।

उपस्थित : श्री पी0एस0जंगपांगी, सदस्य(न्यायिक)।

अधिवक्ता निगरानीकत्री : श्री प्रेम चन्द्र शर्मा।

अधिवक्ता प्रतिपक्षी : श्री ललित उपाध्याय, श्री राजीव पंवार।

निर्णय

प्रस्तुत निगरानी निगरानीकत्री उपरोक्त ने अपर आयुक्त गढ़वाल मण्डल, पौड़ी कैम्प देहरादून के समक्ष प्रस्तुत अपील संख्या–59/2012–13 श्रीमती कमलेश बनाम श्रीमती सुनीता जैन आदि में पारित आदेश दिनांक 11–12–2013 के विरूद्ध की गई है।

निगरानी की पृष्ठभूमि संक्षेप मे इस आशय की हैः–

उत्तरदात्रीगण 1 व 2 उपरोक्त द्वारा एक विभाजन का वाद अन्तर्गत धारा–176/178जमीं0वि0अधि0 भूमि खाता संख्या–1029 खसरा नं0 1005 मिनजुमला क्षेत्रफल 0.679 हे0 स्थित ग्राम ज्वालापुर तहसील व जनपद हरिद्वार के सम्बन्ध में वर्ष 2003 में सहायक कलेक्टर, प्रथम श्रेणी/परगनाधिकारी, हरिद्वार के न्यायालय में योजित किया गया। विद्वान सहायक कलेक्टर, हरिद्वार ने दिनांक 18–08–2004 को प्रारम्भिक आज्ञप्ति इस आशय से पारित की, कि वादग्रस्त भूमि में उभयपक्षों के पारस्परिक हिस्सों के सम्बन्ध में कोई विवाद नही है, तद्नुसार वादीगण/उत्तरदात्रीगण का 3/4 भाग एवं प्रतिवादी/निगरानीकत्री का 1/4 भाग घोषित कर तत्पश्चात तत्समय प्रचलित विधिक प्राविधानों के अन्तर्गत वादग्रस्त भूमि का क्षेत्रफल 3 $^{1/8}$ एकड़ से कम होने के आधार पर नीलामी की कार्यवाही हेतु तहसीलदार, हरिद्वार से मूल्यांकन सम्बन्धी आख्या प्राप्त करने का आदेश पारित किया। इस आदेश से क्षुब्ध होकर प्रतिवादिनी/निगरानीकत्री संख्या 1 ने प्रथम अपील आयुक्त गढ़वाल मण्डल, पौड़ी के न्यायालय में प्रस्तुत की, जिसमें अपील प्रारम्भिक स्तर पर अपीलकत्री की अनुपस्थिति के आधार पर दिनांक 21–11–2005 को निरस्त कर दी गई। आदेश 21–11–2005 के उक्त आदेश के सापेक्ष अपीलकत्री द्वारा 22–11–2005 को एक प्रार्थना पत्र शपथ पत्र सहित इस

आशय से प्रस्तुत किया गया कि प्रश्नगत आदेश को वर्णित आधारों के आलोक में अपास्त कर अपील पुनर्स्थापित की जाए। दिनांक 21–11–2005 को प्रथम अपीलीय न्यायालय में अपीलकर्त्री की अनुपस्थिति का कारण परिवार में विवाह कार्यक्रम होना एवं अधिवक्ता द्वारा दूरभाष से उत्तरदात्रीगण पर तामीली न होने के आधार पर अगली तिथि स्वयं न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाना बताया जाना उल्लिखित किया गया।

उक्त आदेश दिनांक 21–05–2005 के विरूद्ध दो अक्षरसः समान पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र दिनांक 22–11–2005 एवं 23–11–2005 एक ही अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किये गये जिसके सम्बन्ध में अलग–अलग तिथियों पर दो आदेश पारित हुए। प्रथम आदेश दिनांक 29–09–2006 के द्वारा पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र इस आधार पर अस्वीकार किया गया कि अपीलार्थिनी के विद्वान अधिवक्ता का ये तर्क कि प्रतिपक्ष पर तामील न होने की दशा में यह मान लिया जायेगा कि अपीलार्थिनी की ओर से अनुपस्थिति के बावजूद न्यायालय स्वतः अन्य तिथि नियत कर देगा, बलहीन है एवं अपीलार्थिनी का दायित्व है कि वह प्रत्येक नियत तिथि पर न्यायालय मे पैरवी हेतु उपस्थित हों। दूसरा आदेश दिनांक 22–05–2009 अतिसूक्ष्म (cryptic) रूप से एक शब्द ''restored'' अंकित कर पारित किया गया है।

दिनांक 06–02–2013 को प्रथम अपील विद्वान अपर आयुक्त, गढ़वाल मण्डल को निर्णीत हेतु स्थान्तरित की गई एवं उनके द्वारा आक्षेपित आदेश दिनांक 11–12–2013 इस आशय से पारित किया गया कि पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र दिनांक 22–11–2005 अस्वीकृत किया जाता है क्योंकि समान प्रार्थना पत्र दिनांक 23–11–2005 पर विद्वान आयुक्त द्वारा दिनांक 29–09–2006 को पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र अस्वीकार किये जाने का आदेश पारित किया जा चुका था। इस आदेश के विरूद्ध ही वर्तमान निगरानी प्रस्तुत हुई है।

मैंने उभयपक्षों के विद्वान अधिवक्तागण को सविस्तार सुना एवं सभी स्तर की पत्रावलियों का सम्यक अवलोकन किया।

निगरानीकर्त्री के विद्वान अधिवक्ता के तर्क सम्बन्धी मुख्य कथन ये है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय में अपील के अदम पैरवी में निरस्त होने के आधार पर कदाचित 2 पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किये गये एवं दिनांक 22–05–2009 को अपील पुनर्स्थापित होने के उपरान्त आक्षेपित आदेश द्वारा पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र पोषणीय न होने सम्बन्धी निष्कर्ष अवैधानिक है, कि प्रथम अपील पुनर्स्थापित होने के उपरान्त उसकी कार्यवाही एक लम्बी अवधि तक चली तत्पश्चात आक्षेपित आदेश पारित कर विद्वान अपर आयुक्त ने न्याय के दरवाजे बन्द कर दिये है, जबकि सुनवाई एवं सारवान न्याय के पक्ष में अपील पुनर्स्थापित होनी चाहिए थी, कि न्यायालय के किसी त्रुटि अथवा भूल के लिए अपीलकर्त्री को दण्डित नही किया जा सकता है, कि प्रथम अपीलीय न्यायालय की पत्रावली के आदेश पत्रों से ही भ्रम की स्थिति पैदा होती है परन्तु उसके लिए अपीलकर्त्री को कैसे दोषी ठहराया जा सकता है एवं कि दो पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र विधितः वर्जित नहीं हैं। विद्वान अधिवक्ता ने अपने तर्कों के सम्बन्ध में मा0 उच्च न्यायालय, इलाहाबाद, राजस्व परिषद, उत्तर प्रदेश एवं मा0 उच्चतम न्यायालय द्वारा

प्रतिपादित न्यायिक सिद्धान्तों की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया जिसका विशलेषण संगत आगामी प्रस्तरों में यथास्थान किया जायेगा।

उत्तरदात्रीगण/वादीगण 1 व 2 के विद्वान अधिवक्ता के तर्क हैं कि अपीलकत्री/प्रतिवादिनी का आचरण वाद के परीक्षण स्तर से ही विलम्बकारक एवं व्यवधान जनक रहा है क्योंकि उसने परीक्षण न्यायालय में कोई प्रतिवाद पत्र प्रस्तुत नही किया एवं अनावश्यक विलम्ब किया गया जबकि वादग्रस्त भूमि में उभयपक्ष के पारस्परिक हिस्सों के सम्बन्ध में कोई विवाद नही था, कि विद्वान आयुक्त, गढ़वाल मण्डल का आदेश दिनांक 29-09-2006 गुणदोष पर आधारित है जिसके विरूद्ध कोई निगरानी नही की गई है जबकि आदेश दिनांक 22-05-2009 किस प्रकार पारित हुआ स्पष्ट नही है क्योंकि उत्तरदात्रीगण/वादीगण के समक्ष यह प्रकरण व्यवहरित नही हुआ, कि निगरानीकत्री/प्रतिवादिनी को आदेश दिनांक 29-09-2006 को वापस लिये जाने की प्रार्थना करने का अवसर था, कि आदेश दिनांक 22-05-2009 का उल्लेख आदेश पत्र में नही है तदनुसार यह आदेश अवैधानिक एवं निष्प्रभावी है जिसे छल द्वारा प्राप्त किया गया है, कि निगरानीकत्री मूल विभाजन वाद में कुर्रे का निर्धारण नही होने देना चाह रही है एवं अनावश्यक विलम्ब कर वादीगण/उत्तरदातागण को हैरान/परेशान कर रही है क्योंकि मूल वाद 13 वर्षो से अंतिम रूप से निस्तारित नही हो पाया है जिससे वादीगण के साथ अन्याय हो रहा है, कि वादीगण/उत्तरदातागण निगरानीकत्री/प्रतिवादिनी से क्षतिपूर्ति पाने की अधिकारी है, कि निगरानीकत्री/प्रतिवादिनी के अधिकार समाप्त नही हो रहे हैं एवं कुर्रे निर्धारण से उसका हिस्सा पृथक हो जायेगा। विद्वान अधिवक्ता ने अपने तर्क के समर्थन में मा0 उच्च न्यायालय, इलाहाबाद उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रमेश चन्द्र गुप्ता आदि 2015 (126) आर0डी0 पृष्ठ 443 में पारित न्यायिक व्यवस्था की ओर भी ध्यान आकर्षित किया गया।

प्रथम अपील दिनांक 21-11-2005 को अपीलार्थिनी की अनुपस्थिति में निरस्त की गई जबकि अपील प्रारम्भिक स्तर पर ही विचाराधीन थी क्योंकि अभी उत्तरदातागण उपस्थित नही हुए थे, तत्पश्चात 1 व 2 दिन उपरान्त पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र शपथ पत्र के साथ प्रस्तुत किये गये (एक ही प्रार्थना पत्र पर्याप्त था एवं 2 समान प्रार्थना पत्रों में अलग तिथियां अंकित की गई है)। पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र दिनांक 23-11-2005 को यथापूर्व में उल्लिखित दिनांक 29-09-2006 को निरस्त कर दिया गया। विचारणीय है कि इस प्रार्थना पत्र का उल्लेख आदेश पत्रों में कहीं भी नही है। दूसरी ओर पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र दिनांक 22-11-2005 पर अंकित सूक्ष्म आदेश "restored" दिनांक 22-05-2009 के उपरान्त आदेश पत्र दिनांक 23-06-2009 से निरन्तर अंकित किये जाते रहे हैं यद्यपि इस आदेश का उल्लेख भी आदेश पत्रों में कहीं नही है।

यद्यपि विद्वान आयुक्त के आदेश दिनांक 29-09-2006 को चुनौती नही दी गई है न ही उसे वापस लेने के लिए प्रथम अपीलीय न्यायालय में प्रार्थना की गई है तथापि इस आदेश के अवलोकन मात्र से ही विदित होता है कि विद्वान आयुक्त ने समय से एवं शपथ पत्र

में स्पष्ट आधार सहित प्रस्तुत पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र को कठोर तकनीकी दृष्टिकोण अपनाकर अस्वीकार किया गया है जो कि मेरी दृष्टि में न्यायसंगत नही है।

दूसरी ओर आदेश दिनांक 22–05–2009 यद्यपि एक सकारण एवं सुव्यक्त (reasoned & speaking) आदेश नही है फिर भी यह आदेश वास्तविक रूप से पारित किया गया(कोई पक्ष इस आदेश की वास्तविकता को नकार नहीं रहा है) जिसके उपरान्त अपील की कार्यवाही निरन्तर व्यवहरित हुई है। प्रश्न यह उठता है कि आदेश दिनांक 22–05–2009 का प्रभाव आदेश दिनांक 29–09–2006 को वापस (recall) करने जैसा है? क्या विद्वान अपर आयुक्त का आक्षेपित आदेश दिनांक 22–05–2006 के दृष्टिगत पोषणीय है? क्या पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्रों पर पारित विरोधाभासी आदेशों के दृष्टिगत किसी पक्ष विशेष को उसके लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है?

प्रथम अपीलीय पत्रावली के अवलोकन से इतना तो स्पष्ट है कि पुनर्स्थापन सम्बन्धी प्रकरण अत्यन्त तदर्थ एवं अनियमित रूप से व्यवहरित हुआ है। दोनों पुनर्स्थापन प्रार्थना पत्र मूल पत्रावली से परे व्यवहृत हुए प्रतीत होते हैं। दोनों प्रकीर्ण प्रकरण की तरह भी नहीं व्यवहृत हुए हैं क्योंकि उनसे सम्बन्धित तिथियों व कार्यवाहियों का कोई विवरण कहीं नहीं अंकित है। जो प्रार्थना पत्र जिस पक्ष के पक्ष में निस्तारित हुआ उसे तो संगत आदेश का संज्ञान था ही। प्रश्न यह भी है कि अपील अदम पैरवी में अस्वीकृत होने के उपरान्त परीक्षण न्यायालय की पत्रावली यथाशीघ्र वापस क्यों नहीं हुई ताकि अन्तिम आज्ञप्ति सम्बन्धी कार्यवाही आगे बढ़ाई जाती है। जो भी हो इस स्तर पर यह अवधारण करना कठिन है कि कौन से पक्ष का व्यवहार दोषपूर्ण रहा है या दोनों का व्यवहार समान रूप से दोषपूर्ण है। मूल वाद में कार्यवाही भले ही वर्षों से लम्बित हो परन्तु इस आधार पर ही सम्बन्धित पक्षों को सुनवाई के अवसर से वंचित नही रखा जा सकता है। प्रथम अपीलीय न्यायालय के विरोधाभासी पुनर्स्थापन सम्बन्धी आदेशों के दृष्टिगत संदेह का लाभ अपीलार्थिनी/निगरानीकत्री को दिया जाना न्यायसंगत होगा ताकि सुनवाई क़र ही प्रथम अपील निस्तारित हो। इस सम्बन्ध में अपीलार्थिनी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत मा0 उच्च न्यायालय, इलाहाबाद की मनसाराम बनाम जिला उप चकबन्दी संचालक, बहराईच 2002 (93) आर0डी0 595 प्रतिपादित न्याय व्यवस्था कि न्यायालय का विवेक सुनवाई के पक्ष में न कि सुनवाई से वंचित रखने में प्रयुक्त होना चाहिए वर्तमान प्रकरण में प्रासंगिक है इसी प्रकार राजस्व परिषद, उत्तर प्रदेश द्वारा शंकर सिंह बनाम श्री नाम 2001 (92)आर0डी0 367 में प्रतिपादित न्यायिक सिद्धान्त कि सारवान एवं प्राकृतिक न्याय हेतु गुणदोष के आधार पर सुनवाई का अवसर अत्यधिक विलम्ब के उपरान्त भी दिया जाना न्यायोचित है भी इस प्रकरण में प्रासंगिक है। मा0 उच्चतम न्यायालय द्वारा हुकमचन्द बनाम माधवा ए0आई0आर0 1983 पृष्ठ 540 में दी गई न्यायिक व्यवस्था कि निगरानी को तुच्छ/क्षुद्र आधारों पर न सुना जाना न्यायसंगत नही है भी इस प्रकरण में प्रासंगिक है

दूसरी ओर उत्तरदात्रीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत पूर्व उल्लिखित मा0 उच्च न्यायालय, इलाहाबाद की न्याय व्यवस्था का जंहा तक प्रश्न है वर्तमान प्रकरण में

यह इसलिए प्रासंगिक नही है प्रकरण में विलम्ब का मर्षण अन्तर्निहित नही है न ही मिथ्या शपथ पत्र का प्रकरण अन्तर्निहित है। वर्तमान प्रकरण प्रथम अपीलीय न्यायालय के दो विरोधाभासी आदेशों से जनित है जिस हेतु यह स्पष्ट नही है कि क्या कोई पक्ष इसके लिए उत्तरदायी है मात्र संदेह के आधार पर किसी पक्ष को दोषी नही ठहराया जा सकता है।

चूंकि आदेश दिनांक 22–05–2009 बाद में पारित हुआ है जिसे किसी स्तर पर चुनौती भी नहीं दी गई है जिसके आधार पर प्रथम अपील की कार्यवाही एक लम्बी अवधि तक विचाराधीन रही है अतः उसका प्रभाव आदेश दिनांक 29–09–2006 को वापस लिये जाने जैसा है भले ही यह आदेश (well reasoned & speaking) नही है। इस आदेश के उपरान्त अपील की कार्यवाही स्थानान्तरित होकर भी निरन्तर चलती रही है एवं अंततः आक्षेपित आदेश पारित किया गया है। अपील की कार्यवाही उक्तानुसार पुनर्स्थापित होने के दृष्टिगत विद्वान अपर आयुक्त पूर्व में पारित विरोधाभासी आदेशों की व्याख्या कर अपील की कार्यवाही समाप्त नही कर सकते थे। जैसा कि पूर्व में विवेचित किया जा चुका है सुनवाई का मार्ग तुच्छ/क्षुद्र अथवा तकनीकी आधारों पर बन्द नही किया जाना चाहिए तदनुसार आक्षेपित आदेश दिनांक 11–12–2013 पोषणीय नही है।

प्रकरण के निस्तारण में विलम्ब हुआ है। कुल लगभग 13 वर्षों में से 9 वर्ष प्रथम अपीलीय न्यायालय के स्तर प्रथम अपील लम्बित रही है जिसमें अंततः यथापूर्व में विवेचित तकनीकी आधार पर आदेश पारित हुआ है।

विभाजन सम्बन्धी विधिक प्राविधानों में आये परिवर्तन के दृष्टिगत यदि वादग्रस्त भूमि में उभय पक्ष से पारस्परिक हिस्सों पर विवाद न हो जैसा कि प्रथम अपीलीय ज्ञाप से भी विदित होता है तो प्रथम अपील एक सूक्ष्म सुनवाई कर शीघ्र निस्तारित की जा सकती है ताकि परीक्षण न्यायालय में अन्तिम आज्ञप्ति की कार्यवाही शीघ्र सम्पन्न हो सके।

आदेश

निगरानी स्वीकार की जाती है विद्वान अपर आयुक्त, गढ़वाल मण्डल का आदेश दिनांक 11–12–2013 निरस्त कर प्रकरण विद्वान अपर आयुक्त, गढ़वाल मण्डल को इस आशय से प्रतिप्रेषित की जाती है अपील की सुनवाई यथाशीघ्र सम्पादित की जाए।

(पी0एस0 जंगपांगी)
सदस्य(न्यायिक)।

आज दिनांक 14–03–2016 को खुले न्यायालय में उदघोषित, हस्ताक्षरित एवं दिनांकित।

(पी0एस0 जंगपांगी)
सदस्य(न्यायिक)।